1937D Before Leaving Ujjain

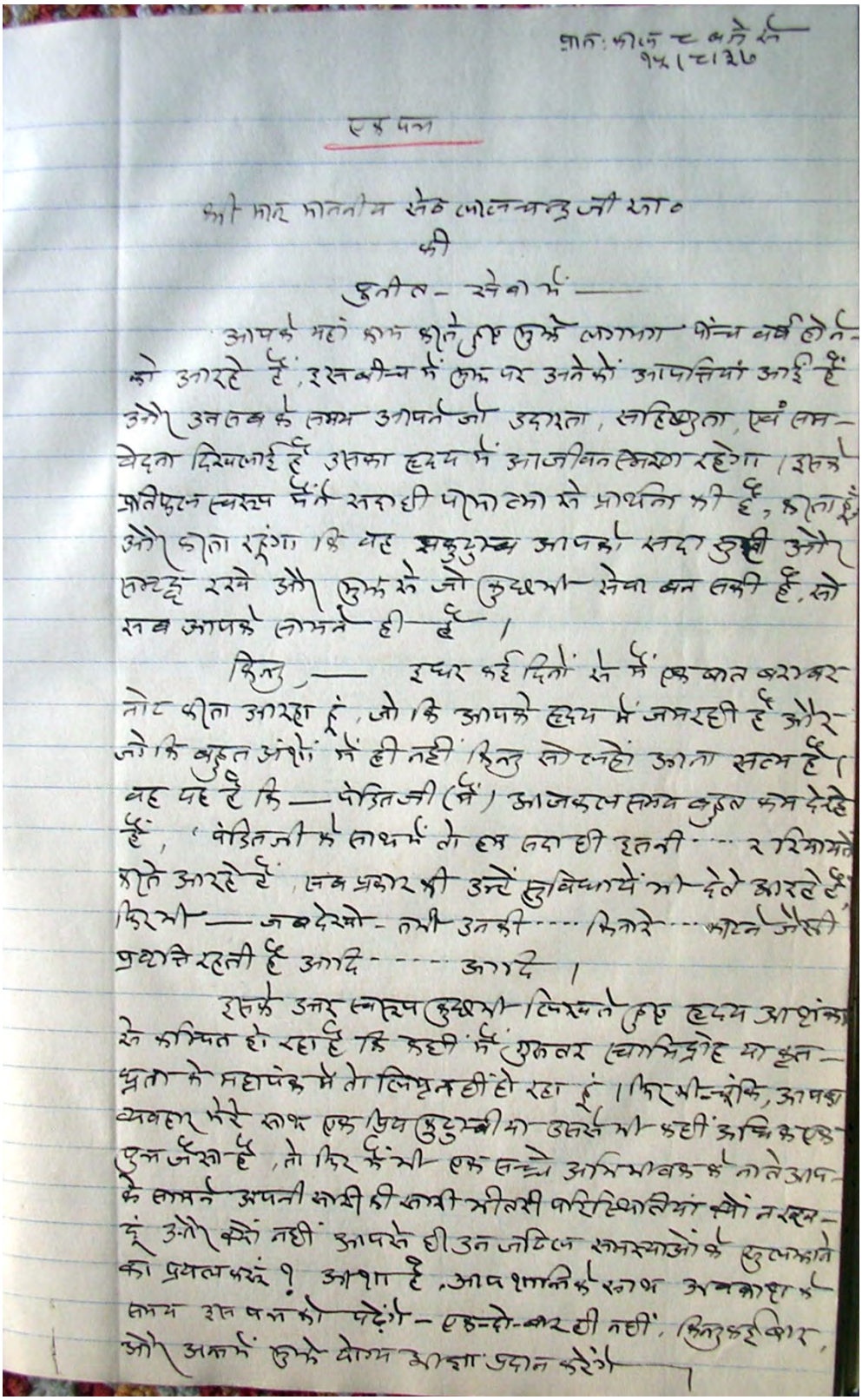

प्रात: काल ८ बजे से
१५।८।३७

एक पत्र

श्रीमान् माननीय सेठ लालचन्द्र जी सा०
की
पुनीत- सेवा में —

आपके यहां काम करते हुए मुझे लगभग पांच वर्ष होने को आरहे हैं, इस बीच में मुझ पर अनेकों आपत्तियां आई हैं और उन सब के समय आपने जो उदारता, सहिष्णुता, एवं सम-वेदना दिखलाई है उसका हृदय में आजीवन स्मरण रहेगा। इसके प्रतिफल स्वरूप मैंने सदा ही परमात्मा से प्रार्थना की है, करता हूं और करता रहूंगा कि वह सकुटुम्ब आपको सदा सुखी और समृद्ध रक्खे और मुझ से जो कुछ भी सेवा बन सकी है, सो सब आपके सामने ही है।

किन्तु, — इधर कई दिनों से मैं एक बात बराबर नोट करता आरहा हूं, जो कि आपके हृदय में जमरही है और जो कि बहुत अंशों में ही नहीं किन्तु सोलहों आना सत्य है। वह यह है कि — पंडितजी (मैं) आजकल समय बहुत कम देरहे हैं, 'पंडितजी के साथ में तो हम सदा ही इतनी ... रियायतें करते आरहे हैं, सब प्रकार की उन्हें सुविधायें भी देते आरहे हैं, फिर भी — जब देखो - तभी उनकी ···· सितारे ··· [illegible] जैसी प्रवृत्ति रहती है आदि ---- आदि।

इसके उत्तर स्वरूप कुछ भी लिखते हुए हृदय आशंका से कम्पित हो रहा है कि कहीं मैं गुरुतर स्वामिद्रोह या कृत-घ्नता के महापंक में तो लिप्त नहीं हो रहा हूं। फिर भी — चूंकि, आपका व्यवहार मेरे साथ एक प्रिय कुटुम्बी या उससे भी कहीं अधिक एक पुत्र जैसा है, तो फिर मैं भी एक सच्चे अभिभावक के नाते आप-के सामने अपनी खरी ही खरी भीतरी परिस्थितियां क्यों न रख-दूं और क्यों नहीं आपसे ही उन जटिल समस्याओं के सुलझाने का प्रयत्न करूं? आशा है, आप शान्ति के साथ अवकाश के समय इस पत्र को पढ़ेंगे - एक-दो-बार ही नहीं, किन्तु कई बार, और अन्त में मुझे योग्य आज्ञा प्रदान करेंगे।

ब्यावर से यहां आने के पूर्व मेरे और आपके बीच में जो लम्बा पत्र व्यवहार हुआ था — उसमें की एक खास बात को संभवतः आप भूले न होंगे। यह वह बात थी — जो कि मेरे जीवन के खास उद्देश्य को प्रकट करती थी और जिसके लिए आपने अपने ता० १।१।३५ के पत्र में अपने ही हस्ताक्षरों द्वारा लिखा था कि "—

"जो कार्य आप किया चाहते हैं उसके लिए जितना अनुकूल वायुमंडल यहां आपको मिलेगा उतना और जगह नहीं"।

मैं भी आपके उक्त आश्वासन को अथवा इसी ही प्रकार के अन्य आश्वासनों को पाकर आपकी सेवा में उपस्थित हुआ था — किन्तु दैववशात् मैं उत्तरोत्तर विपत्तियों में फंसता चला गया और अपने उद्देश्य-पूर्ति की ओर कुछ भी ध्यान न दे सका।

आज से ठीक १५ साल पूर्व — जबकि मैंने स्वप्न में श्री धवल-ग्रन्थ का स्वाध्याय करते हुए अपने को देखा था और उसी दिन के प्रातःकाल मुझे श्री धवल जयधवल के मंगलाचरण के दो पत्र पता नहीं कहां से पलंग के नीचे पड़े हुए मिले थे, जो कि आज भी सुरक्षित हैं — तभी यह संकल्प मैंने किया था कि — 'अपने जीवन में सिद्धान्तग्रन्थ धवल-महाधवलादि का मैं हिन्दी में अनुवाद करूंगा।'

इसी प्रकार समय-समय पर और भी संकल्प किए थे जिनमें से दो एक इस प्रकार हैं —

'अपने जीवन में गीता के समान सर्वोपयोगी जैनगीता या इसी प्रकार के नाम की कोई पुस्तक की रचना अवश्य करूंगा।"।

"श्री पंचाध्यायी के अवशिष्टांश को पूरा करने की भावना हृदय में पूर्ण रूपेण जागृत है —"

पंडित प्रवर स्व० टोडरमलजी के मोक्षमार्ग प्रकाश का — उत्तरार्ध भी तदनुरूप शैली में लिखूंगा।"

ता० १५।१२।३१ (डायरी से)

ये संकल्प मैं आपके सामने स्व-गर्व-प्रदर्शनार्थ नहीं रख रहा हूं, किन्तु इसलिए कि भीतर मेरे शौक की ज्योति (आग) जल रही है जो मुझे एक क्षण भी चैन नहीं लेने देती है और रात-दिन काम करने के लिए प्रेरित करती रहती है क्योंकि 'हीरा मुख से ना कहे लाख हमारो मोल'।

संभव है, आप मेरी इतनी बकवास से ऊबें कि पहले तो सोचि-
जाते कि है। पर यथार्थ में हीरा के समान ही मेरे अवगुण या दोष
जबसे पूर्व किसी के समान आते हैं और मेरे गुणों को तो आप जैसे
किसी की ही पारखी परख सके हैं। यह कहते हुए मुझे हर्ष होता
है, क्योंकि आपके यहां पाँच वर्ष से अधिक रहने पर भी वहाँ के लोग
मेरी बाहरी शान्ति - सादगी और कुशलता - आदि से ही परिचित हो
सके परन्तु भीतरी भाव या रहस्य को वे लोग कुछ भी नहीं समझ
सके। यह बात मैं आज कहता होऊं सो नहीं - किन्तु वहाँ से विदा
होते वक्त दिए गए अपने भाषण में भी - मैंने स्पष्ट कही थी जिसकी
कि '[illegible]' द्वारा ली गई कापी मेरे पास सुरक्षित है उसके शब्द
ये हैं —

दूसरा यहाँ से आने का कारण एक यह भी था कि मैं वहाँ-
पर तीन २ संस्थाओं में काम करते २ एकदम थक गया था और इधर
गृहस्थ के भार से मुक्त हो जाने के कारण - पैसे जोड़ने की कोई चिंता नहीं
रही थी - साथ ही आपने अपने ता० १०।१०।३७ के पत्र में
लिखा था कि —

"यह तो आप जानते ही हैं कि यहां कोई साधारण पठन-पाठन का
कार्य नहीं है बल्कि ज्ञान की चर्चा और ज्ञानानन्द ही अभीष्ट है"।

इन शब्दों से मैंने सोचा - चलो अच्छा ही चला जाय, जिससे
माथा पच्ची की झंझट दूर हो जायगी - तो अपने संकल्पों के पूरा
करने का अवसर मिलेगा और इसी लिए मैं बिना अधिक विचार
किए आपकी सेवा में उपस्थित हो गया। लेकिन यदि मुझे
कृतघ्न न समझा जाय - तो मुझे स्पष्ट शब्दों में कहने की आज्ञा
दीजिए - कि मैं बालकों के साथ माथा पच्ची करते समय कई बार
इतनी झुंझला उठा कि एक दम नौकरी छोड़ कर जाने को भी
तैयार हो गया - फिर भी अपने किये हुए उस वायदे को स्मरण
कर - रह जाता रहा हूं। वह वायदा - आने के कुछ दिन बाद ही
आपके ग्वालियर से आए हुए पत्र के उत्तर में पत्र द्वारा किया था
'कि भविष्य में कभी भी मेरे से छोड़ जाने का प्रश्न उठता हुआ आप
न पायेंगे'। क्योंकि उस समय आपको यह ख्याल उत्पन्न हो गया था
कि कहीं अन्य का चिंतन न करो और चले जावें - तो फिर हमें —

पंडित का सवाल मुश्किल हो जायगा। इन्हीं शब्दों को आपने ता० २६ ३/२८ पत्र में प्रकट किया था। इसीलिए कई बार परिस्थिति वश चित्त उकताने पर भी पुनः मन पर नियन्त्रण करके काम चालू रक्खा और जाने का नाम नहीं लिया — क्योंकि इस बीच में दो अच्छे २ स्थानों से आग्रह पूर्ण निमंत्रण आए थे - जो कि आपके देखने के लिए इस पत्र के साथ भेजे जाते हैं - पर अन्त में उन्हें वायदा-खिलाफी के भय से इनकार कर दिया।

इन सब बीती बातों से यहां पर कहने का भाव यही है कि परिस्थितियों के साथ अन्तर्द्वन्द्व एवं बाह्ययुद्ध करते हुए मैंने इतने समय तक आपके यहां काम किया है। किन्तु अब कुछ ऐसी विलक्षण स्थिति उत्पन्न हो गई है कि आप मेरा समय-पर समय बढ़ा रहे हैं और बढ़ाना चाहते हैं, इधर मेरे शरीर का यह हाल है कि लगातार ८ बजे से ४ बजे तक बैठे रहने से इस डेढ़ माह में मेरा वज़न ६ पौंड कम हो गया है जब कि आपके यहां रूखी चौके के मैं दाल खाता हूं - यदि कहीं अपने घर की रूखी दाल रोटी ही खाता - तो पता नहीं कितना अधिक वज़न कम हो जाता? और उधर जो परम पुण्योदय से मैंने भी धवल का काम प्रारंभ कर रक्खा है - उसको लिए कई प्रकाशकों ने प्रकाशन भी प्रारंभ कर दिया है - एक तरफ दक्षिण में पं० वंशीधरजी सोलापुर छपा रहे हैं - तो दूसरी ओर उत्तर में दिल्ली की कोई चंदा पार्टी प्रकाशित कर रही है, जिसकी सूचना अभी हाल ही के ता० २१८ के जैनमित्र में निकली है। यह कार्य कितना कठिन एवं गम्भीर है यह किसी भी विद्वान से अज्ञात नहीं है और मेरे जीवन का तो यही सर्वस्व है, इसके पीछे न मैंने आज तक पैसे की चिन्ता की है न अपने पर आने वाली महान विपत्तियों की ही। अभी उस दिन भी (परसों) मैंने बातों बातों में बतलाया कि जहां मैं अपने थोड़े से रुपयों को डिपाजिट करने की आपसे कह रहा था कि दूसरे ही दिन उक्त सूचना को बांचते ही मैंने डिपाजिट करना स्थगित कर दिया, क्योंकि - आगे उसके सम्पादन-सहायतार्थ उनकी भी आवश्यकता पड़ेगी और संभव है कि नौकरी भी छोड़ना पड़े। क्योंकि मैं सब कुछ छोड़ सकता हूं पर अपना आवश्यक कार्य नहीं छोड़ सकता हूं। आज के इस आर्तध्यान - प्रचुर कलियुग में जिनवाणी ही तो हमारा पथप्रदर्शन करती है। किन्तु यह —

कहा है कि — इन वेदनाओं का विलास लेकर
जिनका भी आहत रस धारा ।

आज के समय में जब कि मनुष्य द्वारा तपश्चर्या, ध्यान, सहयोग आदि को भी महत्त्व का स्थान असंभव हो रहा है, तब मैंने अपने जीवन का लक्ष्य आलोकन ज्ञानोपयोग — निरन्तर पाठशाला एवं उसका विकास ही रखा है और यही लक्ष्य सुख की देने वाली कोई भी चाबी है।

पुरातन जमाने में भी जितने महापुरुषों ने पाठशालाओं का निर्माण किया है, वह किसी न किसी भाग्यशाली के आश्रय में ही हुआ है या उनके निजी निवेदी हुआ है। परन्तु वर्तमान में उल्टी गंगा बह रही है अर्थात् जो जितना भाग्यशाली समझा जाता है, यथार्थ में आसानी से वह उतना ही अभागा है, पर हर्ष है कि आप इसके अपवाद हैं और ऐसी बात को समझ कर ही मैं आप जैसे समय एवं धन के सुविधा पूर्ण स्थान को थोड़ा भी अपनी ओर से पाने में उपस्थित हुआ था। आजतक भी विद्यालय के कार्य बाबत आपसे मैंने किसी प्रकार की सहायता नहीं चाही है। बल्कि पाठशालों की आवश्यकता होने पर गांठ से एक लम्बी रकम उनके लिए खर्च की है और आगे भी करने को सदा प्रस्तुत रहूंगा — पर आपसे तो मैं केवल एक ही सहायता चाहता हूं और वह है समय के सुभीते की।

आप इस बात की तो कल्पना ही छोड़ दीजिए कि मैं आपके यहां ~~क~~ काम करने से जी चुरा रहा हूं — या ज्यादा काम नहीं करना चाहता हूं। यदि आपको कदाचित् मेरी ओर से ऐसा भ्रम हुआ हो, तो आप उसे एक दम निकाल दीजिए। इस समय की सुविधा के बारे में मुझे यह कहना है कि मुझमें जो साहस हुआ है वह यही है कि मैं पठन-पाठन के ~~कार्यों~~ अधिक से अधिक कार्य को अल्प से अल्प समय में करने की क्षमता रखता हूं। और अपनी इसी शक्ति से अब पहले मैंने कई बार में तीन-तीन स्थान पर काम किया है और १९५५ से फरवरी तक की मेरी लगातार पांच वर्ष आमद रही है। वहां से पांच वर्षों में पांच हजार रु० तो केवल कर्ज में ही दिया है। जिसकी रसीदें या पत्र-व्यवहारों की नकल साथ में भेज रहा हूं कि आप उस सत्यता को जान सकें। पर जब अचानक कारण दूर हुआ — तो मैं अपने संकल्पों —

को पढ़ाने के लिए यहाँ चला आया - क्योंकि वहाँ रहते हुए अहं भाव असंभव सा प्रतीत हो रहा था। अस्तु

पहले मैं यह कह रहा था, कि आपके यहाँ जितना भी पठन-पाठन का काम है वह मैं ४ घंटों में बखूबी सम्पन्न कर सकता हूँ - और आप भविष्य में चाहें तो देखेंगे - कि मेरी इस बात में कहाँ तक सच्चाई है। मैं तो यहाँ तक कहने के लिए भी तैयार हूँ कि यदि कोई भी विद्वान यह मेरी बात अप्रमाणित कर देंगे - तो मैं आज से तनख्वाह की तनख्वाह भी न लूँगा - दंड स्वरूप तब आपको छोड़ दूँगा।

समझ में नहीं आता कि आपको मैं किस प्रकार विश्वास दिलाऊँ - शायद आपको याद होगा कि दो वर्ष पूर्व शीतकाल में जब आप लोहाघाट से घूमकर आए और यहाँ ~~दस~~ लड़की जा - रही थी: जिन्हें कि मैं ११ से ४ बजे तक ५ घंटे पढ़ा रहा था - और जिसे कि आपने आते ही कहा था कि जो भी आज तक इतनी पढ़ाई किसी समय ... रही है किसी वे कुल डिवीजन में उत्तीर्ण हुई, और उनको गणित विषय में भी अच्छी उपलब्धि हुई। आज भी मैं इसी बात को दुहराता हूँ कि पढ़ाई का समय जितना कम हो जायगा - उतना ही साथ सुन्दरता से बोध होगा - यदि ईमान माना जाय - तो ज्ञान की महिमा में जो यह गीत गाया जाता है कि -

'कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरें जे,
ज्ञानी के छिन मांहि, त्रिगुप्ति तें सहज टरें ते।'

आदि - सब झूठे हो जायें।

फिर मैं तो केवल कह ही नहीं रहा हूँ अपने तजुर्बों का अनुभव भी रखता हूँ, ~~कि~~ और उसके फलस्वरूप ही मेरा परीक्षा-फल सर्वोत्तम यहाँ तक कि शत-प्रति-शत रहा है यह बात आप कभी भी चाहकर विद्यालय और बोर्ड के रिकार्ड से ज्ञात कर सकते हैं। फिर पढ़ाना तो एक कला है न कि मजदूरी। जैसे वैद्यों की मोटी खुराकों से ~~जो आ~~ जितनी देर से आराम मिलता है, उतना भी नहीं जल्दी रस मात्राओं से होता है और उतना भी नहीं आजकल के इंजेक्शनों से होता है

कि यही बात शिक्षणकला के विषय में भी है। जो बात उपयुक्त समय पर 1 घंटे में सिखाई जा सकती है वह अनुपयुक्त वक्त पर 10 घंटे में भी नहीं सिखाई या सीखी जा सकती है, यह मेरा शिक्षाशास्त्रियों का मत एवं अनुभव रहा है। इसलिए मैं आपको इस बात का विश्वास दिलाता हूं, कि आप इस प्रस्ताव को दो दिन में एकदम ही इसका [illegible] कीजिए या ध्यान न दीजिए कि मैं काम करने से जी चुराता हूं। किन्तु विश्वास कीजिए कि मैं जो कुछ भी कह रहा हूं, उसे आप अक्षरशः बल्कि उससे भी कहीं अधिक मात्रा में कार्यान्वित पायेंगे। यदि ऐसा न होता - तो जहां पर सर्वोच्च पढ़ाई होती है उन कालेजों में जो केवल लोगों को 8 ~~अधिक~~ घंटे की ड्यूटी न रखी जाती परन्तु शिक्षाशास्त्रियों ने इस रहस्य को समझा है और यही कारण है कि आज उनका वैभव बढ़ा है और उनका समुचित दिशा में कार्य बढ़ा है।

उत्तम पढ़ाई के लिए अधिक समय की आवश्यकता नहीं हुआ करती किन्तु उत्तम से उत्तम समय की आवश्यकता हुआ करती है। यदि ऐसा न होता, तो प्रातःकाल के ताजे समय को अमृत वेला मुहूर्त न कहा जाता और न यह माना जाता कि उस समय सरस्वती जागृत होती है। प्रकृति का जितना भी गंभीर निरीक्षण किया जाता है, उससे यही पता चलता है कि उपयुक्त समय (एक-दो घंटा-काल) का बंधन ही पढ़ाई के लिए सर्वोपयोगी है न कि अधिक से अधिक समय तक विद्यार्थियों को घेरे रहने का।

बस, इसी उद्देश्य को सामने रखकर मैं आपसे निवेदन करता हूं, कि जो भी आप पढ़ाई के लिए उत्तम से उत्तम समय देंगे मैं देने के लिए तैयार हूं, पर शर्त यही है कि पढ़ाई का समय 2 घंटे से अधिक बिल्कुल न होना चाहिए।

मनुष्य का जीवन अल्प है, उसमें भी अगणित संकट हैं। इसीलिए भगवान महावीर गौतम से हमेशा कहा करते थे कि

'समयं गोयम, मा पमायए,'

'अर्थात् हे गौतम, समय की रक्षा करो, मत प्रमाद करो।'

11 बजे तक ठीक [illegible]